Mob. : 9931444467
8340539341

Dr. Md. Sayeed Alam
Associate Professor
Deputy Director of UGC, HRDC, P.U.
P.G. Dept. of A.I.H. & Archaeology,
Patna University, Patna-800005 (Bihar)

Director : Former Deputy Director of DDE, P.U & Senate Member of M.U. Gaya
Member : Former Senate & Finance Committee, Approval Fixation & Seniority, P.U.
Chairman : Haji Hakim Mahmood (H.H.M.) Educational & Welfare Trust, Gaya (Bihar)

Professor's Qtr., Krishna Ghat, Patna University, Patna - 800 005
E-mail : sayeedpu@gmail.com, hhmgaya@gmail.com

(३) शैलेन्द्र साम्राज्य का उत्थान

जब यह भी सुनिश्चित रूप से निर्धारित न किया जा सका हो, कि शैलेन्द्र वंश के राजाओं की राजधानी कौन-सी थी, और उन्होंने किस स्थान को केन्द्र बनाकर अपनी शक्ति का विस्तार किया, तो उनके क्रमबद्ध इतिहास को लिख सकना एक असम्भव बात ही है। पर बहुसंख्यक विद्वानों को अभी यह मत ही स्वीकार्य है, कि शैलेन्द्र राजाओं की राजधानी श्रीविजय (सुमात्रा में) थी, और उसी को केन्द्र बनाकर उन्होंने अपने साम्राज्य का निर्माण किया था। इन राजाओं के सम्बन्ध में जो भी सूचनाएं अभिलेखों तथा अरब और चीनी विवरणों से उपलब्ध हैं, उनका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। उनके आधार पर शैलेन्द्र साम्राज्य के उत्थान का जो चित्र हमारे सम्मुख उपस्थित होता है, उसे संक्षेप के साथ इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है।

सातवीं सदी में श्रीविजय के राज्य का उत्कर्ष प्रारम्भ हो गया था और पड़ास के अन्य राज्यों को जीत कर उसने अपने साम्राज्य का निर्माण शुरू कर दिया था। इसीलिए पलेमबङ् के दूसरे अभिलेख और जाम्बी के अभिलेख में श्रीविजय के अधीनस्थ प्रदेशों के निवासियों को यह चेतावनी दी गई है, कि यदि वे विद्रोह का विचार भी मन में लाएंगे, तो उन्हें कठोर दण्ड दिए जाएंगे। इन अभिलेखों का उल्लेख पिछले अध्याय में किया जा चुका है। सुमात्रा के विविध प्रदेशों के अतिरिक्त बंक द्वीप पर भी सातवीं सदी में ही श्रीविजय का प्रभुत्व स्थापित हो गया था। ६८६ ईस्वी में श्रीविजय की सेनाओं ने जावा पर भी आक्रमण किया था। श्रीविजय के सातवीं सदी के इन प्रतापी राजाओं में एक श्रीजयनाश या श्रीजयनाग था, जिसका नाम पलेमबङ् से उपलब्ध प्रथम लेख में आया है, जहां उसके सुकृत्यों का उल्लेख किया गया है। आठवीं सदी में श्रीविजय राज्य का और अधिक उत्कर्ष हुआ, और मलाया प्रायद्वीप भी उसकी अधीनता में आ गया। लिगोर (मलाया) से प्राप्त जिस अभिलेख में श्रीविजयनृपति या श्रीविजयेन्द्रभूपति द्वारा तीन बौद्ध चैत्यों के निर्माण का उल्लेख है, उसके सम्बन्ध में इसी अध्याय में ऊपर लिखा जा चुका है। यह अभिलेख ७७५ ईस्वी का है, जिससे इस बात में कोई सन्देह नहीं रह जाता कि आठवीं सदी के मध्य भाग तक मलाया पर भी श्रीविजय का आधिपत्य स्थापित हो गया था। मलाया को अपनी अधीनता में लाने वाले श्रीविजय के ये राजा शैलेन्द्र वंश के थे, यह भी लिगोर प्रस्तरखण्ड के दूसरे पार्श्व पर उत्कीर्ण अभिलेख से प्रमाणित होता है, जहाँ कि शैलेन्द्रवंशप्रभु विष्णुनामक राजाधिराज का उल्लेख है। सेदे ने इसी अभिलेख के आधार पर श्रीविजय के राजाओं को शैलेन्द्र वंश का माना है। सातवीं सदी का अन्त होने से पहले

Scanned with CamScanner

ही श्रीविजय की सेनाओं ने जावा पर आक्रमण प्रारम्भ कर दिए थे, और आठवीं सदी में यह द्वीप अवश्य ही उनकी अधीनता में आ गया था। जावा के कालसन गांव से ७७८ ईस्वी का जो अभिलेख मिला है, उसमें शैलेन्द्र वंश के महाराज पणंकरण द्वारा अपने गुरु के सम्मान में तारा मन्दिर के निर्माण तथा कालस नामक गाँव को बौद्ध संघ के लिए दान में दिए जाने का उल्लेख है। कालसन के इस अभिलेख से यह भली-भाँति प्रकट हो जाता है, कि ७७८ ईस्वी तक जावा भी शैलेन्द्रों के प्रभुत्व में आ चुका था। कालसन के अभिलेख में जावा में तारामन्दिर का निर्माण कराने वाले जिस शैलेन्द्रवंशी राजा महाराज पणंकरण का उल्लेख है, क्या वह श्रीविजय का भी राजा था, इस सम्बन्ध में एक मत यह है, कि शैलेन्द्र राजाओं ने जावा की विजय कर वहाँ एक पृथक् राजवंश को स्थापित कर दिया था, जो सम्भवतः श्रीविजय के शैलेन्द्र सम्राटों के आधिपत्य को स्वीकार करता था। महाराजा पणंकरण का ७७८ ईस्वी में जावा पर शासन था, और लगभग इसी समय (७७५ ईस्वी) में लिगोर (मलाया) पर श्री विजयेन्द्रभूपति शासन कर रहा था, जिसने भी वहाँ तीन बौद्ध चैत्यों का निर्माण कराया था। लिगोर के शासक इस श्रीविजयेन्द्रभूपति का नाम राजाधिराज विष्णु था, और सम्भवतः महाराज पणंकरण इस राजाधिराज के प्रभुत्व को स्वीकार करता था।

शैलेन्द्र वंश के शक्तिशाली राजा केवल सुमात्रा, मलाया, जावा और उनके समीपवर्ती द्वीपों को ही अपने आधिपत्य में लाकर संतुष्ट नहीं हो गए, सुदूर पूर्व में उन्होंने कम्बुज (कम्बोडिया) और चम्पा (विएत-नाम या अनाम) के भारतीय राज्यों पर भी आक्रमण किया। चम्पा के राजा सत्यवर्मा (७७४ ईस्वी) के शासन काल में जावा की जल सेना ने उसे आक्रान्त किया, और वहाँ धन-जन का बुरी तरह विनाश किया। राजा सत्यवर्मा के पो-नगर के अभिलेख में जावा के इन आक्रान्ताओं को 'कृष्णरुक्ष पुरुष' और 'कालोग्रपापात्मक' कहा गया है। इन्होंने जहाजों द्वारा चम्पा पर आक्रमण किया था, और वहाँ के मन्दिर को आग लगाकर मुखलिंग को वहाँ से उठा ले गए थे। चम्पा की अनुश्रुति के अनुसार इस मन्दिर का निर्माण द्वापर युग के ५६११वें वर्ष में राजा विचित्रसगर द्वारा कराया गया था। सत्यवर्मा के अपने वीर सैनिकों के साथ जावा के आक्रान्ताओं का पीछा किया, और सामुद्रिक युद्ध में उन्हें परास्त किया। पर शिव की मुखलिंग मूर्ति को वह प्राप्त नहीं कर सका, क्योंकि आक्रान्ताओं ने उसे नष्ट कर दिया था। सत्यवर्मा ने जावा के सैनिकों द्वारा विनष्ट मन्दिर का पुनरुद्धार किया, और उसमें मुखलिंग शिव की नई मूर्ति प्रतिष्ठापित की।

पर जावा के चम्पा पर आक्रमण बाद में भी जारी रहे। सत्यवर्मा के पश्चात् इन्द्रवर्मा चम्पा के राजसिंहासन पर आरूढ़ हुआ था। उसके शासनकाल में ७८७ ईस्वी में जावा की जल सेना ने चम्पा पर पुनः आक्रमण किया, और वहाँ के एक अन्य प्राचीन मन्दिर भद्राधिपतीश्वर को विनष्ट किया। यह मन्दिर भी बहुत पुराना था, और चम्पा की अनुश्रुति के अनुसार इसका निर्माण हजारों साल पूर्व हुआ था। जावा के आक्रान्ताओं को परास्त कर इन्द्रवर्मा ने मन्दिर का पुनः निर्माण कराया, और उसमें इन्द्रभद्रेश्वर शिव की मूर्ति प्रतिष्ठापित की। यद्यपि जावा के आक्रान्ता चम्पा पर स्थायी रूप से अपना

Scanned with CamScanner

आधिपत्य स्थापित नहीं कर सके, पर सुदूर पूर्व के उस देश में जाकर वहाँ के मन्दिरों को नष्ट करना कोई साधारण बात नहीं थी। इससे प्रगट होता है, कि जावा की सामुद्रिक शक्ति बहुत अधिक थी। आठवीं सदी में जावा पर शैलेन्द्र वंश के राजाओं का ही शासन था। अतः चम्पा के जिन अभिलेखों में 'जवबल' (जावा की सेना) द्वारा किए गए आक्रमणों का उल्लेख है, वे जावा पर शासन करने वाले शैलेन्द्र राजाओं द्वारा ही किए गए थे, यह भरोसे के साथ कहा जा सकता है।

जावा के शैलेन्द्र राजाओं ने चम्पा के समान कम्बुज पर भी आक्रमण किए, और उस पर भी अपना प्रभुत्व स्थापित किया। आठवीं सदी के पूर्वार्ध में ही कम्बुज जावा का वशवर्ती हो गया था। जावा के राजा संजय के ७३२ ईस्वी के एक अभिलेख में यह कहा गया है, कि उसने पड़ौस के राजाओं को जीतकर अपने अधीन किया था। कौन-से राजा संजय द्वारा परास्त किए गए थे, यह उसके अभिलेख से स्पष्ट नहीं होता। पर चरित परह्यन्गन् नामक एक ग्रन्थ में उन राज्यों के नाम दिए गए हैं, जिन्हें सेन या सन्नाह के पुत्र राजा संजय द्वारा विजय किया गया था। इन राज्यों में कमिर (ख्मेर) और बारस के नाम भी हैं। कमिर या ख्मेर कम्बुज देश के निवासियों का ही नाम था। कम्बोडिया में स्दोक काक थाम नामक स्थान पर उपलब्ध एक अभिलेख के अनुसार इन्द्रपुर के राजा जयवर्मा द्वितीय ने एक धार्मिक अनुष्ठान इस प्रयोजन से किया था कि कम्बुज देश फिर कभी जावा के प्रभुत्व में न आने पाए। स्दोक काक थाम का अभिलेख संस्कृत और ख्मेर दोनों भाषाओं में है और उसे १०५२ ईस्वी में उत्कीर्ण कराया गया था। पर उसमें जिस राजा जयवर्मा का उल्लेख है, उसका शासन काल ८०२ से ८६९ ईस्वी तक था। इस अभिलेख से यह स्पष्ट है, कि जयवर्मा के शासन काल से पूर्व आठवीं सदी में कम्बुज पर जावा का प्रभुत्व रह चुका था।

कम्बुज पर जावा के शैलेन्द्र राजाओं ने आक्रमण किए थे, इसका संकेत अरब व्यापारी सुलेमान के विवरण से भी प्राप्त होता है। सुलेमान का यह विवरण ८५१ ईस्वी में लिखा गया था। इसके अनुसार ख्मेर का राजा एक दिन अपने वजीर के साथ बैठा हुआ था। बातचीत में जावक के महाराज, उसके वैभव तथा उसके अधीनस्थ देशों का जिकर आ गया। उसे सुनकर ख्मेर के राजा ने कहा, कि मैं चाहता हूँ कि जावक के राजा का कटा हुआ सिर मेरे सम्मुख प्रस्तुत किया जाए। जब यह बात जावक के महाराज को ज्ञात हुई, तो उसने ख्मेर पर आक्रमण करने के लिए एक हज़ार जहाज तैयार कराए और उन्हें सैनिकों से भर कर गुप्त रूप से हमला कर दिया। ख्मेर का राजा परास्त हो गया, और उसके सिर को काटकर जावक ले जाया गया। अरब लेखकों को जावक या जावा से शैलेन्द्र साम्राज्य ही अभिप्रेत था, यह पहले प्रतिपादित किया जा चुका है। इसमें सन्देह नहीं, कि अपनी शक्ति का विस्तार करते हुए शैलेन्द्र सम्राटों ने कम्बुज और चम्पा पर भी आक्रमण किए थे, और कुछ समय तक ये राज्य उनकी अधीनता में भी रहे थे। यद्यपि वे देर तक इन सुदूरवर्ती राज्यों पर अपना प्रभुत्व कायम नहीं रख सके, पर आठवीं सदी में सुवर्णद्वीप तथा सुवर्णभूमि के प्रायः सभी द्वीप एवं प्रदेश शैलेन्द्र सम्राटों की अधीनता स्वीकार करते थे। इन जावक या शैलेन्द्र महाराजाओं के विषय में अरब लेखकों ने जो

Scanned with CamScanner

महत्त्वपूर्ण सूचनाएं दी हैं, उनका उल्लेख हम इसी अध्याय में ऊपर कर चुके हैं। यहाँ इतना लिख देना ही पर्याप्त होगा, कि अरब विवरणों के अनुसार जावक साम्राज्य अत्यन्त शक्तिशाली एवं समृद्ध था। इब्न खोरदाद्बह (८४४ ई०) ने लिखा है, कि जावक का राजा महाराज कहाता था, और उसकी दैनिक आमदनी २०० मन सोना थी। महाराज इस सोने को ठोस ईंटों के रूप में परिवर्तित करके जल में फेंक दिया करता था। ये वहीं सुरक्षित रहा करती थीं, क्योंकि महाराज का खजाना जल में ही था। सौदागर सुलेमान ने भी यही बात एक दूसरे ढंग से लिखी है। उसके अनुसार जावक के राजा के महल और समुद्र के बीच में एक उथली झील थी। प्रतिदिन प्रातःकाल के समय राजा सोने की एक ठोस ईंट इस झील में फेंक दिया करता था। राजा की मृत्यु हो जाने पर इन सब ईंटों को पानी से निकाल कर गिना जाता था, और उनका वजन करके राजकीय बहियों में दर्ज कर दिया जाता था। फिर इस सोने को राज-परिवार के सदस्यों, सेनापतियों, राजकीय गुलामों और अन्य कर्मचारियों में उनकी हैसियत के अनुसार बांट दिया जाता था, और जो शेष बचता था उसे गरीबों को दे दिया जाता था।

चीन के प्राचीन इतिहास-ग्रन्थों में सान फो-त्सी नाम से जिस राज्य का उल्लेख है, वह शैलेन्द्र साम्राज्य ही था। सान फो-त्सी के विषय में जो जानकारी चीनी ग्रन्थों से प्राप्त होती है, उसका उल्लेख भी पहले किया जा चुका है। वस्तुतः, दक्षिण-पूर्वी एशिया के इतिहास में शैलेन्द्र साम्राज्य का निर्माण एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण घटना थी। इस क्षेत्र के विविध प्रदेशों तथा द्वीपों में जो बहुत-से छोटे-छोटे राज्य थे, शैलेन्द्र राजाओं ने उन्हें एक साम्राज्य के अन्तर्गत कर दिया था। जहाँ आज मलायीसिया और इन्डोनीसिया के राज्य हैं, प्रायः उन सब में इस साम्राज्य के कारण राजनीतिक एकता हो गई थी, जिससे इस क्षेत्र की आर्थिक समृद्धि तथा सांस्कृतिक उन्नति में बहुत सहायता मिली थी। शैलेन्द्र साम्राज्य की सामुद्रिक शक्ति भी बहुत अधिक थी, और वह अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का भी महत्त्वपूर्ण केन्द्र था।

शैलेन्द्र राजाओं का महत्त्व इतना अधिक होते हुए भी उनका क्रमबद्ध इतिहास ज्ञात नहीं है। लिगोर (मलाया) के अभिलेख से हमें विष्णु नाम के शैलेन्द्र वंशी महाराज का परिचय मिलता है, जिसका काल आठवीं सदी के उत्तरार्ध (७७५ ई०) में था। कालसन (जावा) के अभिलेख में शैलेन्द्र वंश के महाराज पणंकरण का उल्लेख है, जिसने कि ७७८ ई० में तारा के मन्दिर का निर्माण कराया था। यह पणंकरण महाराज विष्णु (जिसका उल्लेख लिगोर के अभिलेख में है) का उत्तराधिकारी था, या जावा का एक ऐसा पृथक् शैलेन्द्र वंशी राजा था जो श्रीविजय के शैलेन्द्र सम्राटों के प्रभुत्व को स्वीकार करता था, यह स्पष्ट नहीं है। सम्भवतः, पणंकरण का सम्बन्ध शैलेन्द्र वंश की एक ऐसी शाखा के साथ था जो श्रीविजय के शैलेन्द्र वंश से भिन्न थी, पर शैलेन्द्र साम्राज्य के उत्कर्ष काल में उसकी अधीनता को स्वीकार करती थी। जावा के मतराम राज्य का विवरण लिखते हुए हम सोलो के एक अभिलेख पर प्रकाश डालेंगे, जिसमें कि मतराम (जावा में) के राजाओं की एक वंशावली भी दी गई है। इसमें संजय, रकई मतराम, श्रीमहाराज, रकई पणंकरण और उनके बाद के सात राजाओं के नाम हैं। जावा के राजा

Scanned with CamSc

संजय द्वारा कम्बुज देश की विजय की गई थी, यह अभी ऊपर लिखा जा चुका है, उसके बाद मतराम और फिर पणंकरण जावा के राजा बने। संजय का काल ७३२ ई० में था, और पणंकरण का ७७८ ई० में, जो सर्वथा संगत है। पर पणंकरण से कुछ समय पूर्व (७७५ ई० में) मलाया में शैलेन्द्र-वंशी महाराज विष्णु का शासन था। सोलो के अभिलेख में विष्णु का नाम नहीं है। इससे यह परिणाम निकाला जा सकता है, कि जावा के संजय, रकई मतराम और रकई पणंकरण आदि राजा शैलेन्द्र वंश के होते हुए शैलेन्द्र सम्राटों की उस प्रधान शाखा के नहीं थे, जिसका प्रधान केन्द्र श्रीविजय में था, और सुमात्रा तथा मलाया जिसके सीधे शासन में थे। शैलेन्द्र साम्राज्य के उत्कर्ष के समय (आठवीं सदी) में जावा के ये राजा—जो शैलेन्द्र कुल के ही थे—श्रीविजय के सम्राटों का प्रभुत्व स्वीकार करते थे, पर नौवीं सदी में इन्होंने श्रीविजय के प्रभुत्व के विरुद्ध विद्रोह कर अपने को स्वतन्त्र कर लिया था। नौवीं सदी में जावा किस प्रकार श्रीविजय के शैलेन्द्र साम्राज्य से पृथक् हुआ, इस पर अगले अध्याय में प्रकाश डाला जाएगा।

शैलेन्द्र वंश की मुख्य शाखा के राजा महाराज या राजाधिराज विष्णु का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। इसका परिचय लिगोर के अभिलेख से मिलता है। केलुरक (जावा) के अभिलेख में शैलेन्द्रवंशतिलक, वैरीवरवीरविमर्दन महाराज धरणीन्द्र द्वारा मंजुश्री की मूर्ति के प्रतिष्ठापित किए जाने का वर्णन है, और इस राजा के विषय में यह भी लिखा गया है कि उसने सब दिशाओं में अन्य राजाओं को परास्त किया था। यह अभिलेख ७८२ ई० का है। अतः राजा धरणीन्द्र को महाराज विष्णु के बाद का समझा जा सकता है। केलुरक के इसी अभिलेख में श्रीसंग्राम धनञ्जय नाम के एक अन्य राजा का भी उल्लेख है। संग्राम धनञ्जय और धरणीन्द्र में क्या सम्बन्ध था, यह ज्ञात नहीं है।

नालन्दा के ताम्रपत्र में 'शैलवंशतिलक' 'वीरवैरीमथनानुगताभिधान' राजा यवभूमिपाल और उसके पुत्र समराग्रवीर का उल्लेख है, जिसके पुत्र श्रीबालपुत्र देव ने नालन्दा में एक बिहार का निर्माण कराया था। यह लेख सन् ८४१ का है, अतः शैलेन्द्र महाराज श्रीबालपुत्र देव का काल नौवीं सदी के मध्य भाग में रखा जा सकता है। उससे पूर्व समराग्रवीर शैलेन्द्र साम्राज्य का स्वामी था, और उससे पहले यवभूमिपाल, जो व्यक्ति का नाम भी हो सकता है और राजा का विशेषण भी। पर ये सब राजा धरणीन्द्र तथा विष्णु के बाद के थे, इसमें सन्देह नहीं। श्रीबालपुत्रदेव के पश्चात् जो अनेक राजा श्रीविजय के राजसिंहासन पर आरूढ़ हुए, उनमें से कुछ के नाम चोल अभिलेखों तथा कतिपय अन्य साधनों से ज्ञात होते हैं। इनका सम्बन्ध शैलेन्द्र साम्राज्य के ह्रास काल के साथ है, अतः अगले प्रकरण में इनका उल्लेख किया जाएगा।

(४) चोल राज्य से संघर्ष और शैलेन्द्र साम्राज्य का पतन

ग्यारहवीं सदी में सुदूर दक्षिणी भारत के चोलवंशी राजा बड़े प्रतापी थे, और उन्होंने दूर दूर तक विजययात्राएँ कर एक विशाल साम्राज्य की स्थापना की थी। चोल साम्राज्य के विकास का प्रधान श्रेय राजराज प्रथम को है, जो ९८५ ई० में राज-सिंहासन पर

Scanned with CamSc

आरूढ़ हुआ था। दक्षिणी भारत के प्रायः सभी प्रदेशों को अपने अधीन कर राजराज प्रथम ने कलिङ्ग की भी विजय की थी, और मालदीव द्वीपसमूह पर भी अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया था। राजराज द्वारा चोल साम्राज्य के विस्तार की जो प्रक्रिया प्रारम्भ हुई थी, उसके पुत्र राजेन्द्र प्रथम (१०१२-१०४४) ने उसे जारी रखा, और उत्तरी भारत पर आक्रमण कर बंगाल पर अपना आधिपत्य स्थापित किया। राजेन्द्र की सेनाएँ विजय-यात्रा करती हुई गंगातट तक पहुँच गई थीं, जिसके कारण उसने गंगैकोण्ड की उपाधि भी धारण की थी।

राजराज और राजेन्द्र द्वारा स्थापित चोल साम्राज्य की नौसैनिक शक्ति भी बहुत अधिक थी। हिन्द महासागर और बंगाल की खाड़ी के पश्चिमी तट पर चोल साम्राज्य की स्थिति थी और उनके पूर्वी तट पर शैलेन्द्र साम्राज्य की। जलशक्ति में दोनों ही साम्राज्य अत्यन्त समृद्ध थे। इस दशा में यह स्वाभाविक था, कि उनमें परस्पर सम्पर्क स्थापित हो। जिस समय राजराज प्रथम चोल साम्राज्य के उत्कर्ष के लिए प्रयत्नशील था, तभी शैलेन्द्र साम्राज्य के राजसिंहासन पर श्री चूडामणिवर्मदेव विराजमान था। इन दोनों सम्राटों में मैत्री-सम्बन्ध की सत्ता थी, जिसका परिचय उस विशाल ताम्रपत्र द्वारा प्राप्त होता है, जो इस समय लाइडन के कलाभवन में है, और लाइडन अभिलेख कहाता है। इस अभिलेख में २१ ताम्रपत्र हैं, और यह प्रधानतया संस्कृत में है, यद्यपि इसके कुछ अंश तमिल भाषा में भी हैं। लाइडन के इस अभिलेख से ज्ञात होता है, कि कटाह के राजा चूड़ामणिवर्मदेव ने नागपट्टन नामक स्थान पर एक बौद्ध विहार का निर्माण प्रारम्भ कराया था। पर इस विहार के पूरा होने से पहले ही राजा चूड़ामणिवर्मदेव की मृत्यु हो गई थी। उसके पुत्र तथा उत्तराधिकारी राजा श्रीमारविजयोत्तुंगवर्मा-ने अपने पिता द्वारा प्रारम्भ कराए गए विहार को पूरा कराया, और अपने पिता के नाम पर इस विहार का नाम चूड़ामणिवर्मविहार रखा। अपने राज्य काल के २१वें वर्ष में चोल सम्राट राजराज ने इस विहार के लिए एक ग्राम दान में दिया था, और बाद में उसके उत्तराधिकारी राजेन्द्र चोल द्वारा इस दान की पुष्टि भी की गई थी। लाइडन के इस अभिलेख में राजा श्रीमारविजयोत्तुंगवर्मदेव के साथ 'श्रीविषयाधिपति' और 'कटाहाधिपत्यमातन्वन्' विशेषण प्रयुक्त किए गए हैं। अभिलेख के तमिलभाग में कटाह के स्थान पर कडारम आया है। कटाह और कडारम मलाया प्रायद्वीप के केडु या केडाह प्रदेश के प्राचीन नाम थे। श्रीविषय से श्रीविजय ही अभिप्रेत है, यह निर्विवाद है। श्रीविजय के अधिपति और कटाह पर अपने प्रभुत्व का विस्तार करने वाले राजा श्रीमारविजयोत्तुंगवर्मदेव को लाइडन अभिलेख में "शैलेन्द्रवंशसम्भूत" भी कहा है, जिस सबसे इस बात में कोई सन्देह नहीं रह जाता है, कि शैलेन्द्र वंश के सम्राट् चूड़ामणिवर्मदेव और श्रीमारविजयोत्तुंगवर्मदेव चोल राजा राजराज के समकालीन थे, और उनका इस चोल राजा के साथ घनिष्ठ मैत्री-सम्बन्ध था। तभी उन्होंने चोल साम्राज्य के अन्तर्गत नागपट्टन में एक बौद्ध विहार का निर्माण कराया था, और चोल राजा ने उसके लिए एक ग्राम दान में दिया था।

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, कि शैलेन्द्र वंश के इन दोनों राजाओं का उल्लेख

Scanned with CamScanner

चीनी ग्रन्थों में भी मिलता है। १००३ ई० में सान फो-त्सी के राजा से-ली-चू-ल-वू-नी-फू-म-तिअउह्व ने अपने दूत चीन भेजे थे, और सन् १००८ में राजा से-रो-मा-ल-पी ने। सान फो-त्सी (शैलेन्द्र साम्राज्य) के इन राजाओं ने चीनी नामों को लाइडन अभिलेख के श्रीचूड़ामणिवर्मदेव और श्रीमारविजयोत्तुंगवर्मदेव के साथ मिलाया गया है, जो स्पष्ट रूप से युक्तिसंगत है। चोल अभिलेख के अनुसार भी इन राजाओं का काल ग्यारहवीं सदी के प्रारम्भ भाग में ही था।

पर शैलेन्द्र और चोल साम्राज्यों में मैत्री-सम्बन्ध देर तक कायम नहीं रहा। कुछ समय पश्चात उनमें युद्ध प्रारम्भ हो गया, और चोल सम्राट् राजेन्द्र द्वारा बंगाल की खाड़ी को पार कर समुद्र मार्ग से शैलेन्द्र साम्राज्य पर आक्रमण किए गए। चोल राजेन्द्र के अभिलेखों में इन आक्रमणों और समुद्रपार के प्रदेशों की विजय के स्पष्ट विवरण विद्यमान हैं। राजेन्द्र चोल के शासन काल के छठे वर्ष (१०१७-१८ ईस्वी) में उत्कीर्ण हुआ एक अभिलेख तिरुवालांगाड् नामक स्थान से उपलब्ध हुआ है, जिसमें चोल राजा द्वारा कटाह की विजय का उल्लेख है। यह अभिलेख संस्कृत और तमिल दोनों में है, और इसके एक संस्कृत श्लोक में समुद्र को पार कर कटाह को जीतने वाली और अन्य सब राजाओं को अपने सम्मुख झुकने के लिये विवश करने वाली चोल सेनाओं के वीर कृत्यों का विवरण दिया गया है। राजेन्द्र चोल के अन्य भी अनेक अभिलेखों में कडारम (कटाह) की विजय का उल्लेख है। पर शैलेन्द्र वंश के अधीनवर्ती समुद्रपार के प्रदेशों को जीतने का सुविस्तृत विवरण तंजोर के अभिलेख में दिया गया है, जिसे राजेन्द्र चोल के राज्यकाल के उन्नीसवें वर्ष (१०३०-३१) में उत्कीर्ण कराया गया था। इसके अनुसार राजेन्द्र चोल ने उफनते हुए समुद्र में बहुत-से जहाज कडारम के राजा संग्रामविजयोत्तुंगवर्मा के विरुद्ध भेजे थे, जिन्होंने कि इस राजा को उसकी सेना के हाथियों तथा खजाने के साथ बन्दी बना लिया था। समुद्र के मार्ग से किये गये इस आक्रमण द्वारा जो प्रदेश राजेन्द्र चोल के स्वत्व में आ गये थे, इनके नाम इस अभिलेख में इस प्रकार दिये गये हैं, श्रीविजय, पन्नई (सुमात्रा में), मलैयूर (मलायु या जाम्बी), मायिरुण्डिगम (मलाया प्रायद्वीप में), इलंगोसोगम (मलाया प्रायद्वीप में), माप्पप्पालम (क्रा के स्थलडमरूमध्य के समीप), मेविलिम्बंगम (लिगोर के समीप), वलैप्पन्डूरू (पाण्डुरंग), तलैत्तक्कोलम (तक्कोला), मा-दमालिंगम (मलाया प्रायद्वीप में) इलामुरिदेशम (सुमात्रा के उत्तरी प्रदेश में), मानक्कवारम (निकोबार द्वीप) तथा कटाह या कडारम। चोल अभिलेखों में राजेन्द्र द्वारा विजित समुद्रपार के जिन प्रदेशों के नाम दिये गये हैं वे कहाँ स्थित थे और वर्तमान समय में उनके क्या नाम हैं, इस सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद हैं। पर यह सुनिश्चित रूप से कहा जा सकता है, कि इन सबकी स्थिति मलाया प्रायद्वीप, सुमात्रा तथा उसके समीपवर्ती द्वीपों में थी। सम्भवतः, ये सब श्रीविजय के शैलेन्द्र सम्राटों के अधीनस्थ राज्य थे, और राजेन्द्र चोल ने समुद्रपार अपनी शक्ति का विस्तार करते हुए इन सबको अपना वंशवर्ती बना लिया था। तंजोर अभिलेख में संग्राम-विजयोत्तुंगवर्मा को कडारम (कटाह) का राजा कहा गया है, और श्रीविजय को बड़े-बड़े रत्नों से विभूषित द्वारों वाला नगर वर्णित किया गया है। सम्भवतः, ग्यारहवीं सदी तक कटाह को शैलेन्द्र साम्राज्य की द्वितीय राजधानी

Scanned with CamSc

की स्थिति प्राप्त हो चुकी थी। कटाह (केडा) सदृश महत्त्वपूर्ण व्यापार-केन्द्र का राजधानी के रूप में प्रयुक्त किया जाना स्वाभाविक ही था।

यद्यपि चोल सम्राट् राजेन्द्र समुद्रपार के शैलेन्द्र साम्राज्य को परास्त करने में समर्थ हुआ था, पर वह देर तक उसे अपनी अधीनता में नहीं रख सका। सम्भवतः वह शीघ्र ही स्वतन्त्र हो गया था, क्योंकि चोल राजा वीर राजेन्द्र (१०६३-७०) को एक बार फिर कडारम (कटाह) पर आक्रमण कर उसे जीतने की आवश्यकता हुई थी। वीर राजेन्द्र के एक अभिलेख में उस द्वारा कडारम की विजय का उल्लेख आया है। पर वीर राजेन्द्र के लिये भी समुद्रपार के शैलेन्द्र साम्राज्य पर शासन कर सकना सुगम नहीं था। वह उसके राजा से अधीनता स्वीकार कराके ही संतुष्ट हो गया, और उसका राज्य उसे वापस लौटा दिया गया। अपने अभिलेख में वीर राजेन्द्र ने लिखा है, कि कडारम के राजा ने उसकी चरणपूजा की, जिस पर उसका राज्य उसे वापस दे दिया गया। पर शैलेन्द्र और चोल राजाओं के संघर्ष का इससे भी अन्त नहीं हो पाया। ऐसा प्रतीत होता है, कि वीर राजेन्द्र की मृत्यु के पश्चात् कटाह के शैलेन्द्र राजा ने अपने को पुनः स्वतन्त्र घोषित कर दिया, जिसके कारण चोल सम्राट् को फिर उस पर आक्रमण करने की आवश्यकता हुई। वीर राजेन्द्र का उत्तराधिकारी कुलोत्तुंग चोल (१०७०-११२०) था। उसके भी एक अभिलेख में कटाह पर आक्रमण तथा उसके विनाश का उल्लेख है। पर इस चोल राजा के समय में शैलेन्द्र और चोल साम्राज्यों में एक बार फिर मैत्री-सम्बन्ध स्थापित हो गया था। इसका कारण सम्भवतः यह था, कि चोल राजा को भारत में अपने पड़ौसी राज्यों के युद्धों से ही अवकाश नहीं मिलता था, और वह कलिंग के युद्धों में बुरी तरह से फँसा हुआ था। इस दशा में समुद्रपार के शैलेन्द्र राज्य को अपनी अधीनता में रख सकना उसके लिये क्रियात्मक नहीं था। कुलोत्तुंग चोल और शैलेन्द्र वंशी राजा के सम्बन्ध इस काल में कितने मैत्रीपूर्ण हो गये थे, यह लाइडन के छोटे अभिलेख से सूचित होता है। यह अभिलेख राजराज प्रथम के उस अभिलेख से भिन्न है, जिसमें २१ ताम्रपत्र हैं, और जो इस समय लाइडन के कलाभवन में होने के कारण लाइडन अभिलेख कहाता है। कुलोत्तुंग चोल का यह अभिलेख (जिसमें केवल तीन ताम्रपत्र हैं) भी लाइडन के कलाभवन में है। इसके अनुसार किडार (कटाह) के राजा ने अपने दूत राजविद्याधर सामन्त और अभिमानोत्तुंग सामन्त द्वारा जो अनुरोध किया था, उसे स्वीकार कर कुलोत्तुंग द्वारा शैलेन्द्रचूड़ामणिवर्म विहार को दान में दिये गये गाँव को कर-मुक्त कर दिया गया था।

कुलोत्तुङ्ग चोल के उत्तराधिकारी चोल राजाओं के जो अभिलेख उपलब्ध हैं, उनमें न कहीं समुद्रपार के किडार आदि की विजयों का उल्लेख है, और न कहीं किसी शैलेन्द्र राजा का ही जिकर है। इससे यह परिणाम निकाला जा सकता है, कि कुलोत्तुंग के पश्चात् किसी चोल राजा ने शैलेन्द्र साम्राज्य पर आक्रमण करने का प्रयत्न नहीं किया। वस्तुतः, इस समय चोल साम्राज्य की शक्ति क्षीण होनी प्रारम्भ हो गई थी, और उसके राजाओं के लिये यह सम्भव नहीं रहा था, कि वे सुदूरवर्ती मलाया सुमात्रा आदि को अपनी अधीनता में रख सकें।

बारहवीं सदी में शैलेन्द्र साम्राज्य की किस ढंग से प्रगति हुई, यह सुनिश्चित रूप से

Scanned with CamSc

प्रतिपादित कर सकना सम्भव नहीं है। संग्रामविजयोत्तुंगवर्मा के बाद शैलेन्द्र वंश के किसी भी राजा का नाम हमें ज्ञात नहीं है। पर चीनी ग्रन्थों में सान फो-त्सी का और अरब विवरणों में जावक का उल्लेख इसके पश्चात् भी आता है, और इनसे श्रीविजय का शैलेन्द्र साम्राज्य ही अभिप्रेत था, यह पहले निरूपित किया जा चुका है। बारहवीं सदी में शैलेन्द्र वंश हमारी आँखों से ओझल हो जाता है, यद्यपि इस राजवंश द्वारा जिस सुविस्तृत साम्राज्य की स्थापना की गई थी, उसकी सत्ता के प्रमाण हमारे सम्मुख आते रहते हैं। चीनी ग्रन्थों के अनुसार सान-फो-त्सी के राजा सी-ली-म-हा-ला-श (श्रीमहाराज) ने अपना एक दूत मण्डल चीन के सम्राट् की सेवा में भेजा था। इसी प्रकार ११७८ में सान फो-त्सी से एक अन्य दूत-मण्डल चीन गया था। १२२५ ईस्वी के लगभग चाउ जू-कुआ नाम के एक चीनी राजपदाधिकारी ने सान-फो-त्सी के सम्बन्ध में यह लिखा था, कि यह एक शक्तिशाली राज्य की राजधानी तथा व्यापार का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण केन्द्र था। क्योंकि मलक्का का जलडमरूमध्य इसके प्रभुत्व में था, अतः पूर्वी और पश्चिमी देशों के पारस्परिक व्यापार का नियन्त्रण करने की यह स्थिति में था। चाउ जू-कुआ ने १५ ऐसे राज्यों के नाम दिए हैं, जो सान फो-त्सी की अधीनता स्वीकार करते थे। प्रायशः ये राज्य मलाया प्रायद्वीप में थे, यद्यपि इनमें से कुछ की स्थिति सुमात्रा और जावा में भी थी। चाउ जू-कुआ की सूची में एक नाम सी-लन भी है, जिसे सीलोन या श्रीलंका के साथ मिलाया गया है। लंका के पुराने इतिहास चुल्लवंस से हमें ज्ञात है, कि जावक (सान फो-त्सी) ने राजा चन्द्रभानु के सीलोन पर आक्रमण कर कुछ समय के लिए उसे अधीन कर लिया था। अतः चाउ जू-कुआ ने सान फो-त्सी की अधीनता में विद्यमान जिन १५ राज्यों का उल्लेख किया है, उन्हें इस शक्तिशाली साम्राज्य के अन्तर्गत मानना असंगत नहीं है। इसमें सन्देह नहीं, कि तेरहवीं सदी के प्रारम्भ काल में भी सान फो-त्सी या जावक एक शक्तिशाली एवं समृद्ध राज्य था। मलाया प्रायद्वीप में चैया नामक स्थान पर एक अभिलेख उपलब्ध हुआ है, जो ११८३ ईस्वी का है। इस अभिलेख में महाराज श्रीमत्त्रैलोक्यराज-मौलिभूषणवर्मदेव नाम के एक राजा का उल्लेख है। क्योंकि शैलेन्द्र वंश के राजाओं के नामों में प्रायः 'वर्मदेव' आया करता था, अतः यह कल्पना कर सकनी असंगत नहीं होगी, कि त्रैलोक्यराजमौलिभूषणवर्मदेव का भी शैलेन्द्र वंश के साथ सम्बन्ध था, और सम्भवतः वह चूड़ामणिवर्मदेव का ही अन्यतम वंशज था। चैया के अभिलेख में उल्लिखित इस राजा को शैलेन्द्रवंशी मान लिया जाए, तो यह स्वीकार करना होगा, कि चीनी ग्रन्थों में सान फो-त्सी के जिस शक्तिशाली व समृद्ध राज्य का वर्णन है, बारहवीं सदी के अन्त तक भी वहाँ शैलेन्द्र वंश का शासन विद्यमान था।

सान फो-त्सी के रूप में सुवर्णद्वीप (मलायीसिया और इन्डोनीसिया) के क्षेत्र में तेरहवीं सदी तक भी एक शक्तिशाली राज्य की सत्ता थी, जिसके राजा चन्द्रभानु ने १२३६ और १२५६ ई० में श्रीलंका पर आक्रमण किया था। इन आक्रमणों का जो वर्णन चुल्ल-वंश में मिलता है, उस पर इसी अध्याय में ऊपर प्रकाश डाला जा चुका है। ग्यारहवीं सदी में चोल सम्राट राजेन्द्र ने समुद्र पार के जिस राज्य को आक्रान्त कर विनष्ट किया था, वह तेरहवीं सदी में इतना शक्तिशाली हो गया था कि उसका राजा श्रीलंका पर

Scanned with CamSc

आक्रमण कर सका था। पर सम्भवतः श्रीलंका पर आक्रमण करने में चन्द्रभानु ने अनुचित साहस से काम लिया था। इस आक्रमण के कारण उसकी शक्ति क्षीण हो गयी थी, जिससे लाभ उठाकर पाण्ड्य देश के राजा जटावर्मन् वीरपाण्ड्य ने उस पर हमला कर दिया था और उसे परास्त कर मौत के घाट उतार दिया (१२६४ ई०) था।

१२६४ के पश्चात सान फो-त्सी (जावक या श्रीविजय) का तेजी से पतन होने लगा। पाण्ड्य आक्रमण के कारण जो स्थिति उत्पन्न हो गई थी, जावा के राजा कृतनगर ने उससे लाभ उठाया। मलाया प्रायद्वीप पर आक्रमण कर उसने पहले पहंग को जीत लिया और फिर मलयू (जाम्बी) को अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिए विवश किया। ये दोनों राज्य पहले सान फो-त्सी के अधीन थे। मलाया पर कृतनगर का प्रभुत्व देर तक कायम नहीं रहा, पर मलयू (जाम्बी) के जिस राज्य पर से सान फो-त्सी के प्रभुत्व का अन्त राजा कृतनगर द्वारा किया गया था, वह अपनी स्वतन्त्रता को कायम रखने में समर्थ रहा, और शीघ्र ही वह सान फो-त्सी का प्रतिद्वन्द्वी बन गया। इसी समय (तेरहवीं सदी के अन्तिम भाग में) सियाम के थाई लोगों ने भी उत्तर की ओर से मलाया प्रायद्वीप पर आक्रमण प्रारम्भ कर दिये थे। मलायू, जावा और सियाम के बीच में पिस कर सान फो-त्सी की शक्ति निरन्तर क्षीण होती गई, और वह एक स्थानीय राज्य मात्र रह गया। इस स्थिति में यह राज्य १३७७ ईस्वी तक कायम रहा, जबकि जावा ने एक बार फिर उसे आक्रान्त किया और उसे बुरी तरह से नष्ट किया। इस प्रकार श्रीविजय (सान फो-त्सी) के उस शक्तिशाली राज्य का अन्त हुआ, जिसकी स्थापना शैलेन्द्र वंश के राजाओं द्वारा की गई थी।

शैलेन्द्र साम्राज्य के पतन का विवरण देते हुए दो अन्य बातों का उल्लेख करना भी आवश्यक है। आठवीं सदी तक जावा भी इस साम्राज्य के अन्तर्गत था, पर बाद में वहां ऐसे राज्यों की स्थापना हुई, जो न केवल श्रीविजय की अधीनता स्वीकार नहीं करते थे, अपितु उसके विरुद्ध संघर्ष में भी तत्पर रहते थे। अगले अध्याय में हम जावा के इस इतिहास पर प्रकाश डालेंगे।

यह ऊपर लिखा गया है, कि संग्रामविजयोत्तुंगवर्मा के बाद शैलेन्द्र वंश के किसी राजा का सुनिश्चित रूप से पता नहीं मिलता। श्रीलंका पर सान फो-त्सी या जावक के जिस राजा चन्द्रभानु ने आक्रमण किया था, चैया के एक अभिलेख में उसके कुल को कमल से प्रादुर्भूत कहा गया है, और साथ ही ताम्रलिंग का अधिपति भी। तन-म-लिंग उन १५ राज्यों में एक है, जिनका उल्लेख चाउ-जू-कुआ ने सान फो-त्सी के अधीनस्थ राज्यों के रूप में किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है, कि चन्द्रभानु इस तन-म-लिंग या ताम्र-लिंग का राजा था, और उसने सान फो-त्सी (श्रीविजय) के शैलेन्द्रवंशी राजाओं के विरुद्ध विद्रोह कर अपनी शक्ति को बढ़ा लिया था, और सुवर्णद्वीप के क्षेत्र में वही सर्व-प्रधान स्थिति प्राप्त कर गया था।

Scanned with CamSc